समाज में आई शिथिलता का त्याग करें -

किसी समाज की गुणवत्ता उसके सदस्यों की गुणवत्ता पर निर्भर होती है, यहां गुणवत्ता से तात्पर्य है - उसके सदस्यों के आचरण से । अ.भा. दि. जैन गोलालारीय समाज का संगठन समाज को संगठित करने के साथ साथ अपने सदस्यों का सदाचरण बनाए रखने के लिए भी प्रयासरत रहा है जिसके लिए गोलालारीय समाज प्रारंभ से ही प्रसिद्ध रहा है ।

अपनी महाविद्यालयीन सेवा का प्रारंभ इन पंक्तियों के लेखक ने जबलपुर से 1969 में किया था । संभवत: 1971-72 में जबलपुर में क्षुल्लक श्री मनोहरवर्णी जी का प्रवास रहा था, तब उन्हें आहार कराने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, आहारोपरांत उन्हें मंदिरजी में छोड़ने जाते समय महाराजश्री से समाज के संबंध में चर्चा हुई थी, तब पू. श्री क्षुल्लकजी ने अपना स्पष्ट मत व्यक्त किया था कि गोलालारीय समाज का धर्म परायणता में प्रथम स्थान है - संपन्नता में भले ही पिछड़े हों किन्तु धार्मिक आचरण में सदा श्रेष्ठ रहे हैं । उनके कथन के अनुसार उस समय प्रख्यात पंडित, विद्वान यहां तक कि साधु भी (प्राय: गोलालारे या गोलापूर्व होते थे) स्वयं शास्त्रोक्त आचरण का पालन करते थे । आज यहां गोलालारीय समाज संपन्नता की और विकासोन्मुख है । उसके सदस्य व्यापार, व्यवसाय, शासकीय सेवा (डाक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, चार्टर्ड एकाउण्टेंट, बैंक अधिकारी, सेना और पुलिस आदि विभागों में उच्च स्तरीय पदों पर पदस्थ है) में अग्रणी होते जा रहे हैं वही उनके आचरण में शिथिलता आती दिखाई दे रही है । हम अपने कुलाचार से दूर होते दिखाई दे रहे हैं । हमारा खान-पान, चौके के व्यवहार आदि में शिथिलता आती जा रही है । चूंकि व्यक्ति से ही समाज बनता है अत: समाज के संगठन को आदर्श संगठन बनाने के लिए उसके सदस्यों का आचरण भी आदर्श होना आवश्यक है ताकि गोलालारीय समाज की जो प्रतिष्ठा उसके पूर्वजों ने अर्जित की थी वह अक्षुण्ण बनी रहे और उसमें और वृद्धि हो । इस हेतु कुछ विनम्र सुझाव हैं -

1) कुलाचार का पालन - अपने को जैन कहलाने वाले व्यक्तियों को जैन कुलाचार का ज्ञान आवश्यक हैं । संक्षेप में कुलाचार में तीन बातें मुख्य हैं - (अ) नित्य देव दर्शन - प्रात:काल नैत्यिक क्रियाओं से निवृत्त होकर देवदर्शन एक अति आवश्यक कार्य मान कर इसका पालन करना चाहिये । बड़े नगरों में मंदिर कहीं कहीं बहुत मीलों दूर होते हैं । ऐसे स्थानों में मंदिर प्रात: न जा सके तो सुविधानुसार दिन रात में कहीं भी , कभी भी कम से कम एक बार देव दर्शन करना चाहिये । अपने द्वारा पूर्वोपार्जित या इसी भव में बांधे निधिति निकाचित कर्म जिन बिम्ब दर्शन से विनष्ट हो जाते है ।

(2) पानी छानकर पीना - छने पानी की मर्यादा एक अंतमुहूर्त अर्थात् 48 मिनिट है । गर्म पानी की 12 घंटे तथा उबले हुए पानी की 24 घंटे है । सामान्य छने पानी में लौंग, इलायची, सौंफ आदि का पावडर डाल लें तो वह 6 घंटे की मर्यादा का हो जाता है । हम बड़ी सरलता से छना पानी पीकर अपने कुलाचार की रक्षा कर सकते है - बस अपने बेग या जेब में एक छोटा सा दुहरा छन्ना रख लें - जहां भी सार्वजनिक नल या हेडपंप दिखे पानी छानकर पी ले - आफिस, दुकान, स्कूल आदि में अपनी स्वयं की पानी की बोटल रखे, उसमें पानी छान कर सौंफ आदि पावडर डाल ले । 6 घंटे की फुर्सत (पानी छानने की विधि आप जानते ही है या जिनवाणी में देख लें) इससे आपकी जैन होने की पहचान बनेगी और कुलाचार का पालन होगा ।

(3) रात्रि भोजन त्याग - सामान्यतया लोगों को कठिन लगता है पर वास्तव में उतना कठिन है नहीं । एक बार आदत बना लें तो वह अपनी दिनचर्या का अंग बन जाता है - प्रारंभ में समय की मर्यादा तो ली जा सकती है जैसे 7 बजे तक, 8 बजे तक आदि पर अंतिम उद्देश्य रात्रि भोजन, पानी आदि का सर्वथा त्याग ही होना चाहिए । रात्रि भोजन के त्यागी को 2 दिन में एक उपवास अर्थात एक वर्ष में 6 माह उपवास का फल मिलता है और स्वास्थ्य अच्छा रहता है । खाद्य, पेय, लेह और औषधि का रात्रि को पूर्ण त्याग करने वाले को हिंसा आदि के पाप नहीं लगने पाते ।

(4) मद्य, मांस, मदिरा, उदम्बरफलों का तथा सप्त व्यसनों का त्याग - वैसे भी जैन व्यक्ति मद्य, मांस, मदिरा व अंजीर गुलर, पाकर आदि के फलों का सेवन नहीं करता, नहीं शिकार, जुआ, चोरी, वेश्यागमन आदि में लिप्त रहता है । अत: इन्हें संकल्पपूर्वक गुरुजनों के पास बैठकर त्याग आवश्यक रूप से करना चाहिए ।

(5) सूतक पालन विचार - आजकल जन्म एवं मृत्यु सूतक पालन में काफी शिथिलता देखी जा रही है, जो धर्मानुकूल नहीं है । अब मृत्यु के तीसरे दिन ही शुद्धि कर तेरहवीं, पगड़ी आदि की रस्म पूरी की जाने लगी है जो न तो शास्त्रोनुकूल है और न ही वैज्ञानिक । प्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचंद 'पुष्प' ने सूतक पालन शास्त्रीय विश्लेषण' नामक एक लेख में धार्मिक, सामाजिक कार्यों का 'सूतक काल' में अनेक शास्त्रीय उद्धरणों एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण से निषेध किया है । इच्छुक पाठकगणों की मांग पर उक्त लेख की फोटोकॉपी करा कर भेज सकता हूँ । ऐसे पाठक अपना पूरा पता, फोन नं. तथा ईमेल पता अवश्य दें । आशा है गोलालारीय समाज के व्यक्ति इन बातों पर ध्यान दे कर अपनी खोती हुई पहचान एवं प्रतिष्ठा को पुर्नस्थापित करेंगे ।

- डॉ. प्रेमचंद जैन, बैंगलोर

21 जून
अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस -

अधिक प्राचीन हैं जैन योग की परम्परा

योग भारत की विश्व को प्रमुख देन है । यूनेस्को ने 2 अक्टूबर को अहिंसा दिवस घोषित करने के बाद 21 जून को विश्व योग दिवस की घोषणा करके भारत के शाश्वत जीवन मूल्यों को अंतर्राष्ट्रीय रूप से स्वीकार किया है । इन दोनों ही दिवसों का भारत की प्राचीनतम जैन संस्कृति और दर्शन से बहुत गहरा संबंध है । जैन श्रमण संस्कृति का मूल आधार ही अहिंसा और योग ध्यान साधना है । इस अवसर पर यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि जैन परम्परा में योग ध्यान की क्या परम्परा, मान्यता और दर्शन है ? और वह कितना प्राचीन है ?

जैन योग की प्राचीनता और आदि योग - जैन योग का इतिहास बहुत प्राचीन है । प्राग ऐतिहासिक काल में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने जनता को सुखी होने के लिए योग करना सिखाया । मोहन जोदड़ो और हडप्पा में जिन योगी जन की प्रतिमा प्राप्त हुई है उनकी पहचान ऋषभदेव के रुप में की गयी है । मुहरों पर कायोत्सर्ग मुद्रा में योगी का चित्र प्राप्त हुआ है, यह कायोत्सर्ग की मुद्रा जैन योग की प्रमुख विशेषता है । इतिहास गवाह है कि आज तक प्राचीन से प्राचीन और नयी से नयी जितनी भी जैन प्रतिमाएं मिलती हैं वे योगी मुद्रा में ही मिलती हैं । या तो वे खडगासन मुद्रा की हैं या फिर वे पद्मासन मुद्रा की हैं । खडगासन में ही कायोत्सर्ग मुद्रा उसका एक विशिष्ट रूप है । नासाग्र दृष्टि और शुक्ल ध्यान की अंतिम अवस्था का साक्षात रूप इन प्रतिमाओं में देखने हो सहज ही मिलती है । इन परम येागी वीतरागी सौम्य मुद्रा के दर्शन कर प्रत्येक जीव परम शांति का अनुभव करता है और इसी प्रकार योगी बन कर आत्मानुभूति को प्राप्त करना चाहता है ।

जैन योग की अवधारणा - अंतिम तीर्थंकर महावीर ने भी ऋषभदेव की योग साधना पद्धति को आगे बढ़ाते हुए सघन साधना की । उसका अनुकरण करते हुए उन्हीं के समान आज तक नग्न दिगम्बर साधना करके लाखों योगी आचार्य और साधु हो गए जिन्होंने जैन योग साधना के द्वारा आत्मानुभूति को प्राप्त किया । जैन साधना पद्धति में योग एवं संवर एक ही अर्थ में प्रयुक्त हैं । प्रथम शताब्दी के अध्यात्म योग विद्या के प्रतिष्ठापक आचार्य कुन्दकुन्द दक्षिण भारत के एक महान योगी थे उन्होंने प्राकृत भाषा में एक सूत्र दिया ''आदा में संवरो जोगो'' अर्थात यह आत्मा ही संवर है और योग है । जैन तत्व विद्या में जो संवर तत्व है वह ही आज की योग शब्दावली का द्योतक है ।

ध्यान की विशेषता - भगवान महावीर ने ध्यान के बारे में एक नयी बात कही कि ध्यान सिर्फ सकारात्मक ही नहीं होता वर नकारात्मक भी होता है । दरअसल आत्मा को जैन परम्परा ज्ञान दर्शन स्वभावी मानती है । ज्ञान आत्मा का आत्मभूत लक्षण है, किसी भी स्थिति में आत्मा और ज्ञान अलग नहीं होते और वह ज्ञान ही ध्यान है, चूँकि आत्मा ज्ञान के बिना नहीं अत: वह ध्यान के बिना भी नहीं । पढ़कर आश्चर्य लगेगा कि कोई ध्यान मुद्रा में न बैठा हो तब भी ध्यान में रहता है । महावीर कहते हैं मनुष्य हर पल ध्यान में ही रहता है, ध्यान के बिना वह रह नहीं सकता । ध्यान दो प्रकार के होते है - नकारात्मक और सकारात्मक । आर्तध्यान और रौद्रध्यान नकारात्मक ध्यान हैं तथा धर्म ध्यान और शुक्लध्यान सकारात्मक ध्यान हैं । मनुष्य प्राय: नकारात्मक ध्यान में रहता है इसीलिए दुखी है, उसे यदि सच्चा सुख चाहिए तो उसे सकारात्मक ध्यान का अभ्यास करना चाहिए । वह चाहे तो धर्म ध्यान से शुभ की तरफ आगे बढ़ सकता है और शुक्ल ध्यान को प्राप्त कर निर्विकल्प दशा को प्राप्त कर सकता है । इस विषय पर गहरी चर्चा जैन शास्त्रों में मिलती है । वर्तमान में आचार्य महाप्रज्ञ द्वारा प्रवर्तित प्रेक्षाध्यान एवं जैन योग देश में तथा विदेशों में काफी लोकप्रिय हो रहा है ।

जैनयोग के विविध आयाम - भगवान महावीर ने योग विद्या के माध्यम से साधना के कई नए आयाम निर्मित किये । जैसे - भावना योग, अनुप्रेक्षा, अध्यात्म योग, आहार योग, प्रतिमा योग, त्रिगुप्ति योग, पञ्चसमिति योग, षडआवश्यक योग, परिषह योग, तपोयोग, सामायिक योग, मंत्र योग, लेश्या ध्यान, शुभोपयोग, शुद्धोपयोग, संलेखना और समाधि योग आदि । एक साधारण गृहस्थ और मुनि की साधना पद्धति में भी भगवान ने भेद किये है । साधक जब घर में रहता है तो उसकी साधना अलग प्रकार की है जब वह गृह त्याग कर सन्यास ले लेता है तब उसकी साधना अधिक कठोर हो जाती है । आज भी जैन मुनियों की साधना और उनकी दिनचर्या उल्लेखनीय है ।

जैन योग साहित्य - जैन आचार्यों ने योग एवं ध्यान विषयक हजारों ग्रंथों का प्रणयन प्राकृत एवं संस्कृत भाषा में किया है । उनमें आचार्य कुन्द कुन्द के अध्यात्म योग विषयक पञ्च परमागम, अष्टपाहुड, पूज्यपाद स्वामी का इष्टोपदेश, सर्वार्थसिद्धी, आचार्य गुणभद्र का आत्मानुशासन, आचार्य शुभचन्द्र का ज्ञानार्नव, आचार्य हरिभद्र का योग बिन्दु, योगदृष्टि समुच्चय आदि दर्जनों ग्रंथ आचार्य योगेन्दु देव की अमृताशीति, जोगसारू आदि, आचार्य हेमचन्द्र का योगदर्शन आदि प्रमुख है । आधुनिक युग में भी आचार्य विद्यानंदजी, आचार्य विद्यासागरजी, आचार्य तुलसी, आचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य शिवमुनि, आचार्य हीरा, आचार्य देवेन्द्र मुनि, आचार्य आत्माराम आदि अनेक संतों द्वारा तथा अनेक जैन अध्येताओं द्वारा ध्यान योग पर काफी मात्रा में शोध पूर्ण साहित्य का प्रकाशन हुआ है तथा निरंतर हो रहा है । भारतीय योग विद्या को श्रमण संस्कृति का योगदान इतना अधिक है कि उसकी उपेक्षा करके भारतीय योग विद्या के प्राण को नहीं समझा जा सकता । वर्तमान में प्रसन्नता का विषय है कि योग को सरकारी स्तर पर पाठ्यक्रमों में सम्मिलित किया जा रहा है, मेरा निवेदन है कि पाठ्यक्रमों में योग को पढ़ाते समय श्रमण संस्कृति की योग विद्या से भी अवश्य अवगत करवाना चाहिए ।

संकलन - अरुणा जैन, जबलपुर